RESEARCH RIVAL **ISSN: 2456-1096**
(A Multi-Disciplinary Peer-Reviewed and Refereed Bi-Annual Research Journal) **Vol. 10, Issue 2**
July-December 2024

लोकसंगीत के वर्तमान परिपेक्ष्य में मेवाड़

किरण डाँगी
शोधार्थी, संगीत विभाग, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान
E-mail: kirandangi2451@gmail.com

शोध सार
संगीत संपूर्ण भारतवर्ष की आदिकालीन विरासत है वर्तमान में संगीत वैदिक साहित्य से प्रारंभ होकर आध्यात्मिक, लौकिक, धार्मिक एवं कई क्षेत्रों में समान रूप से स्थापित है। लौकिक संगीत, लोक संस्कृति का गुणगान करता आ रहा है अतः लोकसंगीत, लोकगायन, लोकनृत्य, लोकवादन जैसी अनेक धाराओं में विभक्त है। लोकगीतों को लोक चेतना का वाहक माना गया है। मेवाड़ की भूमि, भक्ति एवं शक्ति की संगमस्थली मानी गई है इसलिए यहाँ पग–पग पर लोकगीतों, शौर्य एवं भक्ति गीतों का महत्त्व दृष्टव्य है अर्थात् लोक के सुख–दुख की भावाभिव्यक्ति का माध्यम है लोकगीत। मेवाड़ की संस्कृति–साहित्य, संगीत, कला, चित्रकला, लोकसंस्कृति को एक सूत्र में पिरोए हुए है। मेवाड़ क्षेत्र ने लोकगीतों द्वारा अनेकता में एकता की भावना, सांप्रदायिक समन्वय, लोक परिष्करण का जीवन, अहिंसा व आचरण की यर्थाथता आदि को संबल प्रदान किया है। यहाँ पर लोकसंगीत, नृत्य एवं वाद्यों की जीवंत परंपरा बसती है। पेशेवर कलाकारों ने मेवाड़ के लोकसंगीत को जीवंत बनाये रखा। साथ ही यहाँ के शासकों द्वारा लोकसंगीत के कण–कण को संजोने का प्रयास किया गया। इस प्रकार तमाम संगीतजीवि जातियों द्वारा लोकसंगीत की खुशबू वर्तमान में भी मेवाड़ को महका रही है।
प्रस्तुत पत्र में शोध की ऐतिहासिक विधि के साथ ही विश्लेषण विधि का भी प्रयोग किया गया है। इस पत्र में मेवाड़ के लोकसंगीत का वर्तमान परिदृश्य को देखने का प्रयास किया गया है साथ ही मेवाड़ की यथास्थिति को उजागर करते हुए इसमें लोकसंगीत के संरक्षण एवं विकास की सीढ़ी चढ़ने के क्या प्रयास हो सकते हैं, उन्हें दर्शाया गया है।

मूल आलेख
विश्व की महानतम् लोक संस्कृतियों में राजस्थान की लोकसंस्कृति अपना एक विशिष्ट स्थान लिये हुये है। यहाँ के लोक जीवन के अन्तर्गत लोकगाथाएँ, लोकगीत, लोकनृत्य, लोकनाट्य, लोककथाएँ एवं लोकवाद्य वादन आदि कितने ही रंग हैं।
राजस्थान पर्यटन क्षेत्र में यहाँ के तीज त्यौहार, मेले–उत्सव, लोकनृत्य तथा लोक–वाद्य, ग्राम्य पर्यटन के ऐसे आधार है जहाँ पर्यटक राजस्थान की आत्मा से साक्षात्कार करता है। राजस्थान के कवि कन्हैयालाल सेठिया ने राजस्थानी कला और संस्कृति तथा इतिहास को अनुभव कर लिखा था –

आ तो सुरगा ने सरमावै, इण पर देव रमण ने आवै,
इणरो जस नर–नारी गावै, धरती धोरां री।''[1]

मेवाड़ राजस्थान का एक गौरवशाली एवं शक्तिशाली शौर्यता का क्षेत्र माना जाता है। मेवाड़ अपनी आन–बान–शान के लिए प्रसिद्ध रहा है। यहाँ के लोगों का बहुरंगी जीवन देखा जाता है। यहाँ के प्रत्येक त्यौहार, रीति–रिवाज, काफी उल्लासमय हैं। यहाँ की महिलाओं ने मेवाड़ की सांस्कृतिक विरासत को आगे बढ़ाने का कार्य सदैव किया है। जिस प्रकार मेवाड़ के महाराणा प्रताप ने अपनी भूमि की रक्षा हेतु अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। ऐसे शूरवीर, यौद्धा के देशभक्ति गीतों की खुशबू यहाँ की माटी के कण–कण में समायी हुयी है। मेवाड़ भूमि में रक्त की नदियाँ बहीं हैं अतः मेवाड़ की इस पावन धरा को शक्ति एवं भक्ति की कर्म स्थली माना जाता है ऐसी भूमि के अन्तर्गत वर्तमान में उदयपुर, चित्तौड़, राजसमंद, भीलवाड़ा एवं प्रतापगढ़ जिले आते हैं।
इन जिलों तक फैला मेवाड़ ''बप्पा रावल, महाराणा सांगा, राजसिंह, जयसिंह, कुंभा जैसे अनेक यशस्वी वीरों, मीरा जैसी भक्त, हल्दीघाटी जैसे विश्वप्रसिद्ध युद्धों, चित्तौड़गढ़ और कुंभलगढ़ जैसे दुर्गों, जयसमंद, राजसमंद, पिछोला जैसी झीलों, श्रीनाथ जी, एकलिंग महादेव और सांवरिया जी जैसे मंदिरों तथा ऐसे ही अनेक कारणों से प्रसिद्धि के कीर्तिमान बना रहा है।''[2] साथ ही अम्बामाता, नीमचमाता, करणीमाता, ऊँठाला माता, ईड़ाणामाता, कालका माता, सुखदेवी माता, आवरी माता, झाँतला माता, राठासेण माता, बंक्या राणी आदि अनेक प्रसिद्ध शक्ति पीठ विद्यमान हैं। यहाँ की लोक संस्कृति यथा लोकजीवन, लोककलाएँ, लोकसाहित्य, लोकसंगीत, लोकदेवी–देवता इस भौम की महत्त्वपूर्ण विरासत है।

''लोकसंगीत का समाजशास्त्रीय अध्ययन करने पर हम पाते हैं कि ऐसा गीत संगीत या संगीत संदर्भित भौतिक वस्तु अथवा सहृदय भाव जो सीधे ही किसी लोक विशेष से जुड़ा हुआ हो; अंचल विशेष की संस्कृति और सभ्यता के विभिन्न पहलुओं यथा रीति, नीति, तीज, त्यौहार, उत्सव, रंग, उमंग, खेत, देव, गाँव–गली इत्यादि को अपने भीतर सहेजे हुए हो, लोकसंगीत के अध्ययन मनन की सीमा में माना जाता है।''[3]

लोकसंगीत किसी स्थान विशेष की सभ्यता का मूल स्तंभ माना जाता है जिसमें स्थान विशेष की लोकसंस्कृति का दर्शन होता है। लोकगीत, लोकधुनें, लोकनृत्य एवं लोकवाद्य का समूह जिसे आम लोगों ने रचा हो वही लोक संगीत है।

''लोकसंगीत मानव की मन की अनुभूतियों की सरल, निर्दोष, उन्मुक्त, स्वछन्द और सहज अभिव्यक्ति का परिचायक है।[4] किसी भी स्थान का लोकसंगीत हो उसके कुछ ऐसे पक्ष होते ही है जैसे– ''लोकभजन, लोककीर्तन, पारिवारिक तथा श्रृंगारिक गीत, नृत्यगीत, इतिवृत्यात्मक गीत, व्यवसायिक गीत तथा नाट्यगीत'[5] आदि प्रमुख भागों में लोकगीत विभक्त है।

''प्रत्येक प्रदेश का लोकसंगीत वहाँ की संस्कृति का अविभाज्य अंग होता है। जीवन के विविध शुभ मांगलिक अवसरों पर गीतों का गायन, माँगल्य का घोतक रहा है। लोकगीत स्वयं में इतना समृद्ध है कि कोई भी अन्य प्रभाव इसके महत्त्व को क्षीण नहीं कर सकता। मेवाड़ भूमि इतिहास, संस्कृति, शक्ति, स्थापत्य, खान–पान, पर्यटन आदि अनेक कारणों से अपनी खास भूमिका रखती है''[6] साथ ही संगीत के क्षेत्र में भी पीछे नहीं है। ''मेवाड़ राज्य में जगह–जगह धूणियाँ साधु महात्माओं की चिन्तन स्थली, आध्यात्म विचार और वाणी का प्रभाव लोगों के चित्त पर ही नहीं अपितु घर–घर के अन्दर कीर्तन, भजन, प्रार्थना, पाठ, वातावरण निर्माण में सहायक रहा। इसी की परिणिति परम्परागत धर्मनिरपेक्ष भाव का सामाजिक निरूपण मेवाड़ के लोकाचार की धरोहर में दिखलाई दिया। शैव, वैष्णव, शाक्त, सूफी, प्रकृति देवी–देवता, जैन–श्रषभ, नाकोड़ा–भैरव, नागफणी आदि के प्रति सर्वसामान्य–आस्था की अविरल मानसिकता मेवाड़ धरा की उर्वरक भावना रही है''[7] अर्थात् यहाँ धर्म का स्थान सर्वोपरि है।

''उज्जेणी, चितारणी, पहरावणी, पतवारी–पूजन, विवाह की रस्मों, मरण के काज–कारजों आदि में आर्थिक–व्यवहारों द्वारा प्रकट होती परंपरा, य़द्यपि ग्राम्य संस्कृति की परिचायक थी किन्तु मेवाड़ देश युग–युगीन ग्राम्य समूह की इकाई ही रहा था। अतः मेवाड़ की संस्कृति ग्राम्य रीति–रिवाजों की परिचालक एक विरल विरासत का जीवन्त उदाहरण रही थी।''[8]

मेवाड़ में प्रत्येक कार्य करने से पूर्व देवी–देवताओं की पूजा के साथ गीत गाने की और भजन गाने की परंपरा रही है। मेवाड़ में गाये जाने वाले इन लोकभक्ति गीतों का अध्ययन करके यहाँ की धर्म एवं संस्कृति के दर्शन किए जा सकते हैं।

संगीत भारत की आदिकालीन विरासत है वर्तमान में संगीत वैदिकसाहित्य से प्रारंभ होकर आध्यात्मिक, लौकिक, धार्मिक एवं राजनीतिक जैसे विभिन्न क्षेत्रों में समान रूप से स्थापित है। संगीत को ईश्वरीय रूप माना जाता है। संगीत ईश्वर प्रदत्त मनुष्यों को दी गयी वह कला है जो कष्टों को दूर कर उन्हें शांति पहुंचाती है। लौकिक संगीत, लोक संस्कृति का गुणगान करता आ रहा है। लोकसंगीत मुख्य रूप से लोक गायन, लोकनृत्य एवं लोकवादन जैसी धाराओं में विभक्त है।

मेवाड़ क्षेत्र के लोकसंगीत की पृष्ठभूमि में ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक लोक में लोकगीत संस्कृति एवं गीतों का विकास आदि दृष्टव्य होता है। संगीत की तीनों विधाओं (गायन् वादन एवं नृत्य) की जीवंत परंपरा यहाँ पर विद्यमान है।

मेवाड़ की आहड़ सभ्यता के उत्खनन में डमरू का चित्र प्राप्त हुआ है जो मेवाड़ में संगीत की सुदीर्घ परंपरा का घोतक है। मेवाड़ में संगीत का विकास सभ्यता के विकास के साथ ही कालांतर में होता रहा। मादल, इकतारा, रावणहत्था, डुगडुगी जैसे मेवाड़ के लोक वाद्यों में क्रमशः वैदिक कालीन मृदंग, वीणा, वंशी और डमरू का स्वरूप देखा जा सकता है। मेवाड़ भूखंड का प्राकृतिक सौंदर्य तथा अरावली की ऊँची–नीची पर्वत श्रृंखलाएँ यहाँ के निवासियों का ध्यान आकृष्ट कर उन्हें अपनी सुरम्य अभिव्यक्ति के लिए जाना जाता रहा है। बनास, बेड़च, मेनाल, खारी, मानसी व कोटेश्वरी जैसी छोटी–बड़ी नदियाँ हरे–भरे मैदान, वन्य जीव–जंतु, पक्षियों का कलरव, झीलों व घनघोर घटाओं के सौंदर्य से युक्त मेवाड़ की भौगोलिक पृष्ठभूमि यहाँ के संगीत से चिर स्थाई हो गई है।

म्हारो वीर शिरोमणि देस, म्हाने प्यारो लागे सा।
मेवाड़ आपरो देस, म्हाने प्यारो लागे सा।

सांस्कृतिक दृष्टिकोण से यहाँ की संस्कृति में संगीत की परंपरा का दिग्दर्शन आहड़ एवं गिलूण्ड स्थानों से प्राप्त मृदभांड पात्रखंडो एवं चित्रावशेषों में उपलब्ध होता है। यहाँ के सांस्कृतिक केन्द्रों में नागदा (सहस्त्र बाहु मंदिर), आहड़, माध्यमिका नगरी, चितौड़, मैनाल, जगत, कुंभलगढ़, कैलाशपुरी (एकलिंग जी), श्रीनाथ जी आदि प्रमुख हैं।

मेवाड़ के लोक नाट्यों में रामलीला के रूप में रामभक्ति का संगीत के माध्यम से प्रचार हुआ। परंपरागत संस्कारों से युक्त मेवाड़ के रीति–रिवाज गर्भाधान से जन्म और मृत्यु तक संगीतबद्ध हैं।

जिस प्रकार लोक संस्कृति मानव जीवन के सभी पहलुओं से संबंध रखती है। उसी प्रकार लोकगीत भी हमारे जीवन में व्याप्त हैं, लोकगीतों की सार्थकता हर

काल में बनी रहती है और जीवन की लय इन लोकगीतों में देखी जा सकती है एवं लोक की सृजन के साथ–साथ ही लोकगीतों का प्रचलन माना जाता है। साथ ही लोक के सुख–दुःख की भावाभिव्यक्ति का माध्यम लोकगीत ही हैं।

मेवाड़ की संस्कृति, साहित्य, संगीत, कला, चित्रकला आदि लोक संस्कृति को एक सूत्र में पिरोए हुए हैं। मेवाड़ में सांस्कृतिक जीवन का बड़ा महत्त्व है। सांस्कृतिक आशय की खोज मेवाड़ के लोकगीतों में आवश्यकता तो है ही और प्रासंगिक भी। लोकगीतों का मेवाड़ के जनजीवन में बड़ा महत्त्व देखा जा सकता है। यहाँ की नारी शक्ति ने इन गीतों को संजोकर बहुत बड़ा योगदान मेवाड़ को दिया है।

यहाँ के लोगों का जीवन बड़ा कठिन एवं श्रामसाध्य है फिर भी यहाँ के लोकगीतों की मिठास इस संघर्षमय जीवन में सरलता घोले हुए है। ''घर के भीतर अनाज फटकती सास, चक्की चलाती हुई बहु और कुएँ पर पानी भरती पनिहारिन गीत गाकर कठोर श्रम का परिहार करती हैं।[9] ''अर्थात् सम्पूर्ण गृहस्थ जीवन ही नारी का 'गान' कहा जा सकता है। ''ग्रामीण अथवा पिछड़े क्षेत्रों में निवास करने वाली खेतीहर महिलाएँ पर्याप्त मनोरंजन के संसाधनों के अभाव में प्रचलित लोक संगीत का सहारा लेती हैं। लोकसंगीत के माध्यम से ये साधारण महिलाएँ लोकगीतों व लोकवाद्यों की धुन पर झूम उठती हैं जो इनसे प्रचलित लोकनृत्यों का रूप लेते हैं। सभी प्रकार के शारीरिक कष्टों को भूलकर ये महिलाएँ लोकगीतों के सहारे अपने मन–मस्तिष्क में उपजे समस्त आंतरिक भावों और विचारों को अभिव्यक्ति प्रदान करने में सहायक होती हैं।''[10]

लोकगीतों में प्रत्येक प्रान्त का सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन दृष्टव्य है। मेवाड़ में लोकगीतों के कई वर्ग हैं– विवाहगीत, जिसमें गणपति स्थापना, वरद, कलश, कामण, परभातियाँ, कलश वंदावण, पीठी, सेवरो, घोड़ी, बत्तीसी, मायरो, बना–बनी, माता व भैरू पूजन, तोरण, फेरा, जुआ खेलने से संबंधित, विदाई बधावा आदि कई प्रकार के गीत गाये जाते हैं।

खेल में तंदुरो, वणजारी, लखारो, भांगडली, भाभीसा, पोदीनो, भोपा–भोपण, ब्याई–ब्याणजी ढाँकणी, दूध रो कटोरो, सफाईवाली आदि गीत प्रसिद्ध हैं।

जच्चा से संबंधित गीतों में दीवो, जाजम, पूर्वज, भैरूजी, मोगा, सतीमाता, ड्याढी माता, जीजीबाई, कँवलास, बीजाजी, सोढा राणा, मेंदी, कूकड़ों, मोरयो आदि।

तीज त्यौहारों से संबंधित गीत जिनमें होली, दशामाता, गणगौर, सावण रां गीत आदि प्रसिद्ध हैं।

श्रृंगारिक लोकगीतों में खरबूजों, राणा जी रा गोखड़ा, बीछू, पिछोला, सजणों, सुवटियों, मरोड्या, चूदंडी, हिवडा रो हार, बिछूड़ियों, इंजन, बुगला, कागज री नाव, मूमल, तम्बाकू आदि।

गवरी लोकनाट्य के भी कई गीतों का आमजन में प्रचलन है। जिसमें भक्ति पक्ष के साथ–साथ मनोरंजन भी भरपूर मात्रा में होता है। देशभक्ति से संबंधित गीतों में केसरिया बालम, म्हारो वीर शिरोमणि देश आदि। वहीं अन्य गीत जैसे इंदर, सेल्यां बुलावा रा गीत, हीड़ आदि गीतों का भंडार यहाँ पर देखने को मिलता है। साथ ही अन्य प्रकार के गीत जिनमें देवी–देवताओं के गीत, सोलह संस्कारों के गीत, पारिवारिक संबंधों के गीत, पर्वों के गीत, बालक–बालिका के गीत, पेशेवर जातियों के गीत, ऐतिहासिक गीत आदि के आधार पर लोकगीतों को कई वर्गों में विभक्त करके देखा जा सकता है।

मेवाड़ के प्रसिद्ध लोकगीत घूमर, पटोलियो, लालर, माछर, नौखिला थारी ऊँटारी असवारी, हेली रंग रो बधावो, लहरियों, बिछियो, नावरी असवारी, शिकार, नागजी, भैंरू, पनजी, वालो देश आदि प्रमुख हैं। साथ ही अन्य गीत मांड, सोरठ, ढोला मरवण, पिणीहारी, मूमल, गणगोर एवं सावणी तीज आदि प्रमुख लोकगीत प्रसिद्ध हैं।

मेवाड़ के लोकगीत कुरजां, कागा, तीतर, ऊँट, कोयलड़ी, बैलारी जोड़ी आदि गीतों में यहाँ के वन्य जीवों की संपदा सजीव हो उठी है। वहीं बाजरी, जीरो, पोदिनो, हल्दी, पीपली जैसे गीतों में मेवाड़ की वनस्पति और पैदावर की अभिव्यक्ति मिली हैं। यहाँ की जलवायु एवं झीलों के नैसर्गिक सौंदर्य को बादली एवं पिछोला जैसे गीत स्पष्ट करते हैं।

मेवाड़ क्षेत्र की प्रसिद्ध लोक गायिकाओं में मांड गायिका माँगीबाई (ए ग्रेड आर्टिस्ट) लोक एवं शास्त्रीय गायिका सरस्वती देवी धाँधड़ा एवं अन्य कलाकार फत्तीबाई, वरदीबाई, रेखा सोनार्थी, जानकी देवी, मोहिनी देवी पड़िहार आदि गायिकाओं ने मेवाड़ का गौरव बढ़ाया। वहीं लोकवाद्य वादन में एकल वादन परंपरा के अन्तर्गत स्वतंत्र वादन में सारंगी वादक स्व. पं. रामनारायण जी रहे हैं। वर्तमान में सारंगी के विजय कुमार धाधंड़ा (ए ग्रेड आर्टिस्ट) हैं। साथ ही वर्तमान में कई ऐसे कलाकार हैं जिन्होंने मेवाड़ के लोकसंगीत की जड़ों को संभाला हुआ है।

भक्तिमति मीराबाई के रचित कई लोकभजन जो जगप्रिय हैं। मेवाड़ के लोक में संगीत, अतरंग समाया हुआ है। मेवाड़ की सामाजिक पृष्ठभूमि संगीत की वाहक है। लोकगीतों ने नैतिक आचरण, धार्मिक मान्यताओं, आध्यात्मिक उपलब्धियों व मनोरंजन के पक्ष को मजबूत किया। लोक में संगीत का स्वरूप है अनेकता में एकता की भावना, सांप्रदायिक समन्वय, लोक परिष्करण का जीवन, अहिंसा व आचरण की यर्थाथता आदि को लोकगीतों में संबल प्रदान किया है। ''स्वतंत्र गीत की रचना बिना नृत्य के होती है परन्तु स्वतंत्र नृत्य की रचना बिना गीत के नहीं होती। कुछ

व्यावसायिक नृत्यों को छोड़कर कोई भी लोकनृत्य ऐसा नहीं जिसमें गीतों का परिधान बाद में पहिनाया जाता हो। गीत नृत्य के साथ ही प्रकट होते हैं तथा आधुनिक नृत्यों की तरह वे बाद में नहीं जोड़े जाते हैं।''[11] अर्थात् नृत्य एवं गीत का चोली–दामन का साथ कहा जा सकता है। दोनों ही एक–दूसरे के पूरक हैं।

मेवाड़ के लोकनृत्यों के अन्तर्गत गणगौर उत्सव पर घूमर नृत्य का विशेष प्रावधान है जिसमें घूमर गीत के साथ ही घूमर नृत्य किया जाता है। मेवाड़ के आदिवासी लोग भील एवं मीणाओं में युद्ध नृत्य, घेर नृत्य और गवरी नृत्य, वालर–नृत्य (गरासिया जनजाति) आदि प्रचलित हैं।

तेरहताली नृत्य, लोक कला मंडल उदयपुर में एवं विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों में देखा जा सकता है। मेवाड़ में टूटिया नृत्य जो कि शादी विवाह के अवसर पर महिलाओं द्वारा, दुल्हा–दुल्हन का स्वांग (लोकनाट्य) गीत गाते हुए किया जाता है। उदयपुर का भवई नृत्य (नाट्य) प्रसिद्ध है जिसे पेशेवर कलाकारों के द्वारा विभिन्न लोक सांस्कृतिक कार्यक्रमों के साथ–साथ भारतीय लोककला मंडल में भी देखा जा सकता है। भवई नायक एवं नृत्यकारों की जाति मेवाड़ में अधिक निवास करती है। ''ये हरिशचन्द्र, चन्द्रमलयागिरी, रूक्मणी स्वयंवर, रूक्मणि–मंगल, राजा भृतहरि, रासधारी, दुर्गादास के प्रचलित है।''[12]

''जमरा बीज पर उदयपुर में मीणा औरतें होली मूसल लिए स्वांग करती हैं। स्त्रियों के नाट्य जिसमें ''जवांई के अपनी ससुराल आने पर आस–पास की स्त्रियां इकट्ठी होकर गीत गाकर जवांई के लाड़ मोड़ करतीं हैं।''[13]

'गवरी में पात्र, देवों के अन्तर्गत कालका, शिव–पार्वती, मानव में बुढ़िया, राई, कुटकड़िया, कंजर–कंजरी, मीणा, नट खेतुड़ी, शंकर्या, कालबेलिया, पाईता बादशाह, बणिया, जोगी, गरड़ा, कानगुजरी, कालूकीर, बणजारा, शिकली गर, भोपा, बनवारी, गोमा, बांझड़ी, फत्ताफत्ती, बगली और देवर–भौजाई, दानव में भँवरा, खडूल्या भूत, हत्या दाड़मा, मियावल और पशु–पात्र में सूर (सूअर), रीछड़ी, नार (शेर) आदि 37 के लगभग पात्र होते हैं।''[14] इन प्रत्येक नाट्य (खेल) से संबंधित अलग–अलग लोकगीत देखने को मिलते हैं साथ ही लोकवाद्यों का भी भरपूर काम होता है। मेवाड़ के पद्मश्री देवीलाल सामर ने उदयपुर को लोक कला के क्षेत्र में विश्व रंगमंच पर प्रतिष्ठित किया। उदयपुर में भारतीय लोककला मण्डल, मीरांकला मंदिर, कुंभा संगीत परिषद, संगीत नाट्य निकेतन, राजसमंद–नाथद्वारों में श्री नाथ संगीत शिक्षण केन्द्र, भीलवाड़ा का संगीत कला केन्द्र, चित्तौड़ का शोध स्मृति संस्थान आदि ने वर्तमान मेवाड़ क्षेत्र की संगीत–नृत्य परंपरा को गति प्रदान कर रखी है। मेवाड़ के विशेष क्षेत्र के संबंध में विभिन्न लोकगीतों एवं लोकगीतकारों की महत्ती सांस्कृतिक भूमिका रही है जिसका प्रभाव ऐसे विशेष अंचल पर रहा है ऐसे लोकगीतकार निम्न हुये हैं:–

मेवाड़ क्षेत्र की भक्त शिरोमणि मीराबाई ने अपनी गीत एवं भक्तिमय वाणी द्वारा जनमानस में प्रभु भक्ति का प्रकाश फैलाया। ये कवियित्री के साथ–साथ एक सफल गायिका और संगीतज्ञ भी रहीं। मेवाड़ के महाराणा कुंभा स्वयं बड़े संगीतज्ञ थे इनकी पुत्री रमा बाई भी संगीत में अच्छी मानी गई। महाराणा कुंभा के राजवंश में यह संगीत परंपरा चालू थी और उसका यथेष्ठ लाभ मीरा ने उठाया।

श्याम माली राजस्थान की पारंपरिक कला कठपुतली के विशेषज्ञ हैं जो भारतीय लोककला मंडल उदयपुर में कार्यरत रहे हैं। चन्द्र गंधर्व जिनका लोक संगीत की ओर अधिक रूझान होने से अपने पिता गोपाल जी की परंपरा में महाराज चतुरसिंह जी की डिंगल रचनाओं को गायन रूप में स्वीकृत किया। आजादी के तराने गीत गाकर जनमानस को जागरूकता प्रदान की। नारायण लाल गन्धर्व संगीतजीवी परिवार से आते हैं ये लोकसंगीत के साथ–साथ वायलिन, हारमोनियम, ढोलक, मादल आदि वाद्यों को बजाने में कुशल हैं।

कृष्ण कुमार देहलवी शास्त्रीय संगीत के साथ ही सुगम संगीत, लोकसंगीत, लोकभक्ति गीत, ग़ज़ल आदि के गायन में दक्ष रहे हैं, ये राजस्थान में नामवर गायक भी हैं।

चाँद शिवपुरी, निहालचन्द अजमेरा, पी. दामोदर शास्त्री, जमनाप्रसाद पंवार, लक्ष्मी नारायण राव आदि शास्त्रीय संगीत के साथ–साथ लोकगायक भी रहे हैं। मिश्रीलाल जलान्धरा, नाथद्वारा की कीर्तन गायन व लोक गीत की परंपरा से जुड़े रहे। विनय भटनागर, ईश्वर माथुर जिनका मेवाड़ लोकगीत गायकी और विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान है।

लोक शैली की गायिकाओं में लछुबाई, तुलसीबाई, नारायणी बाई, जमनीबाई आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। हंगामी बाई जिनकी मांड गायकी के H.M.V ने रिकॉर्ड भी तैयार किये थे। मांगीबाई जिन्हें मांड गायन विरासत में मिली और जिनकी कीर्ति विदेशों तक फैली हुई है। सरस्वती देवी धाँधडां, मेवाड़ की मांड गायिकाओं में विशिष्ट स्थान रखती हैं एवं कई शहरों में अपनी लोकगायिका का लोहा मनवा चुकी हैं साथ ही इनके लोकगीतों के एल.पी और एस.पी रिकॉर्डस तैयार किए गए हैं। इस प्रकार मेवाड़ की लोकगीत परंपरा में प्राचीन और आधुनिक लोक गायकों के अनेक नाम सामने आते हैं जिनका मेवाड़ के संगीत परंपरा की विकास गायन में विशिष्ट अवदान है। ऐसे अनेक अल्पख्यात गायकों की भूमिका को भी नकारा नहीं जा सकता।

अतः लोक संगीत के संरक्षण और विकास में पेशेवर कलाकारों तथा पेशेवर जातियों का महत्त्वपूर्ण योगदान

रहा है। संगीत के संरक्षण एवं विकास में मेवाड़ की आदिवासी एवं जनजातीय कला हेतु इन जातियों का महत्त्वपूर्ण योगदान था। इनमें भील जाति का गवरी नृत्य, भोपा जाति के लोगों का रावणहत्था एवं जंतर जैसे लोकवाद्यों के साथ पाबूजी के पावड़े का गायन, नट जाति की कठपुतली द्वारा नाट्य अभिव्यक्ति प्रमुख हैं। कालबेलिया जाति का पूंगीवादन एवं चकरी नृत्य, भवई, सांसी जाति एवं कंजर लोगों के संगीत एवं नृत्य की कुशलता यहाँ की अमूल्य धरोहर है। मेवाड़ में संगीत की पेशेवर जाति गन्धर्व ने भी संगीत के कठोर अभ्यास से मेवाड में संगीत को विकसित किया है। गन्धर्व समाज के दमामी, नगारची, ढोली आदि जाति के कलाकारों ने भी यहाँ की राजनीतिक पृष्ठभूमि में संगीत को सूर्योदय से लेकर समग्र रात तक जीवंत बनाये रखा। मेवाड़ के शासकों ने शास्त्रीय और लोकसंगीत को समान रूप से प्रोत्साहित किया। लोकसंगीत की परंपरा में भक्ति और लोकगीतों का अनूठा सामंजस्य है जो लोक के हृदय को द्रवित करने का सशक्त माध्यम है।

निष्कर्षतः लोकसंगीत का सामाजिक, आर्थिक और साहित्यिक प्रभाव मेवाड़ की संस्कृति पर अक्षुण्ण रहा है इसलिए मेवाड़ की लोक संगीत परंपरा के कलाकारों की संगीत परंपरा को मेवाड़ के सांस्कृतिक गौरव में दर्शाना आवश्यक हो जाता है।

वहीं वर्तमान में भी संगीतजीवी वर्ग लोकसंगीत के मूल को सींचकर सजीव बनाए रखने में योगदान दे रहे हैं व साथ ही नई–नई प्रतिभाएँ सामने आ रहीं हैं जो लोकसंगीत में विशेष रूचि रखते हैं। ये अपने–अपने स्तर पर लोकगीतों के संरक्षण के प्रयास कर रहे हैं, साथ ही सरकारों द्वारा भी कई छात्रवृत्तियाँ एवं योजनाएँ लागू की गईं हैं जो संगीत के क्षेत्र में दी जातीं हैं। लेकिन हमारे लोकसंगीत पर अन्य देशों का प्रभाव भी कुछ कम नहीं है। आज किसी भी सांस्कृतिक कार्यक्रम, वैवाहिक समारोह आदि को देख लिजिए, रिमिक्स एवं लोकगीतों को तोड़–मरोड़कर पेश करने का जबरदस्त चलन है। ये हमारे लोकसंगीत के क्षेत्र हेतु अत्यंत ही सोचने का विषय है। लोकसंगीत की जड़ों को संजोने का कार्य सभी संगीत के चहेतों को करना चाहिए अन्यथा मात्र कैसेट्स एवं पुराने एलबम तक ही हमारा लोकसंगीत सीमित रह जाएगा।

संदर्भ :

1. व्यास गोपालः मेवाड़ के इतिहास में आलेख, हिमांशु पब्लिकेशन उदयपुर, प्र.सं. 2020, पृ. 33
2. नंदवाना नवीन : लोकभक्ति परंपरा, अंकुर प्रकाशन उदयपुर, 2024, पृ. 162
3. वही, पृ. 95
4. शर्मा रविः नाद नर्तन (ISSN ugc care), नई दिल्ली 2014, पृ. 62
5. सामर देवीलालः लोकधर्मी प्रदर्शनकारी कलाएँ, प्र.सं. 1968, भा.लो.क.मं. उदयपुर, पृ. 33
6. नंदवाना नवीनः लोकभक्ति परंपरा, अंकुर प्रकाशन, उदयपुर, 2024, पृ. 154
7. व्यास गोपालः मेवाड़ के इतिहास में आलेख, हिमांशु पब्लिकेशन उदयपुर, प्र.सं. 2020, पृ. 17
8. वही, पृ. 13
9. सिसोदिया आशीश : मेवाड़ की लोक परंपराएँ एवं लोकगीत, आर्या पब्लिशर्स उदयपुर 2022, पृ. 6
10. श्रीवास्वत संगीताः राष्ट्रीय एकता का एक सशक्त माध्यम, त्रयम्बक प्रकाशन कानपुर 2023, पृ. 206
11. सामर देवीलालः लोकधर्मी प्रदर्शनकारी कलाएँ, प्र.सं. 1968, भा.लो.क.मं. उदयपुर, पृ. 33
12. सालवी सुरेशः राजस्थानी लोक संस्कृति एवं देवी–देवता, हिमांशु पब्लिकेशन उदयपुर, 2009, पृ. 49
13. वही, पृ. 51
14. व्यास गोपालः मेवाड़ के इतिहास में आलेख, हिमांशु पब्लिकेशन उदयपुर, प्र.सं. 2020, पृ. 150